हकदारी

दीपक शर्मा

हकदारी

"उषा अभी लौटी नहीं है" - मेरे घर पहुँचते ही अम्मा ने मुझे रिपोर्ट दी।

https://www.hindiadda.com/hakadari/

"मैं सेंटर जाता हूँ।" मैं फिक्र में पड़ गया।

दोपहर बारह से शाम छह बजे तक का समय उषा एक कढ़ाई सेंटर पर बिताया करती। अपने रोजगार के तहत। शहर के बाहर बनी हमारी इस एल.आई.जी. कॉलोनी के हमारे सरकारी क्वार्टर से कोई बीस मिनट के पैदल रास्ते के अंदर।

"देख ही आ।" अम्मा ने हामी भरी, "सात बजने को हैं..."

"उषा के मायके से यहाँ फोन आया था।" कढ़ाई सेंटर की मालकिन 'मी' मुझे देखते ही मेरे पास चली आई।

उस सेंटर की लेबर सभी स्त्रियाँ अपनी मालकिन को 'मी' ही बुलाया करतीं। टेलीफोन पर अपने नाम की जगह हर बार उसे जब लेबर ने 'मी' जवाब देते हुए सुना तो बेचारी अनपढ़ यही सोच बैठीं कि उसका नाम ही 'मी' है। उषा के बताने पर मैंने 'मी' का खुलासा खोला भी। तब भी आपस में वे उसे 'मी' ही कहा करतीं।

"कौन बोल रहा था?" मैंने पूछा।

"उसकी बहन शशि, बता रही थी, उनकी माँ की हालत बहुत खराब है..."

"कितने बजे आया यह फोन?"

"यही कोई तीन, साढ़े तीन बजे के बीच..."

मैं घर लौट आया।

"पन्नालाल कुछ ज्यादा ही अलगरजी दिखा रहा है।" अम्मा ने डंका पीटा और लड़ाई का फरमान जारी कर दिया, "पाजी ने हमें कुछ बताने की कोई जरूरत ही नहीं समझी? और जब हम पूछेंगे तो बेहया बोल देगा कि कढ़ाई सेंटर से खबर ले ली होती..."

"देखो तो।" मुझे शक हुआ। "उषा यहाँ से कुछ ले तो नहीं गई?"

चार महीने के आर-पार फैली हमारी गृहस्थी की पटरी सही बैठनी बाकी रही, उषा ही की वजह से। बीच-बीच में वह पर निकाल लिया करती। परी समझती रही अपने को।

उषा की कीमती साड़ियाँ और सोने की बालियाँ अम्मा के ताले में बंद रहा करतीं। सभी को वहाँ ज्यों की त्यों मौजूद देखकर हमें तसल्ली मिली।

"तारादेई जरूर ज्यादा बीमार रही होगी।" मैंने कहा। उषा की माँ का नाम तारादेई था और बाप का पन्नालाल।

"तो क्या उसे फूँककर ही आएगी?" अम्मा हँसने लगी।

अगली सुबह दफ्तर जाते समय मेरी साइकिल अपने आप ही उषा के मायके घर की तरफ मुड़ ली। कढ़ाई वाली गली। पन्नालाल का वहाँ अपना पुश्तैनी मकान था। तारादेई से पहले उसकी माँ कढ़ाई का काम करती रही थी और अब तारादेई और उसकी बेटियाँ उसी की साख के बूते पर खूब काम पातीं उर अच्छे टाइम पर निपटा भी दिया करतीं। इसी पुराने अभ्यास के कारण उषा की कढ़ाई इधर हमारे एरिया-भर में भी मशहूर रही। कढ़ाई सेंटर की मालकिन तो खैर उस पर लट्टू ही रहा करती।

"इधर सब लोग कैसे हैं?" पन्नालाल के घर के बगल ही में एक हलवाई की दुकान थी। हलवाई पन्नालाल को बहुत मानता था और मेरी खूब खातिर करता। मुझे देखते ही एक दोना उठाता और कभी ताजा बना गुलाबजामुन उसमें मेरे लिए परोस देता तो कभी लड्डू की गरम बूँदी।

"आओ बेटा!" उस समय वह गरम जलेबी निकाल रहा था। हाथ का काम रोककर उसने उसी पल कड़ाही की जलेबी एक दोने में भर दीं, "इन्हें पहले चखो तो..."

"कल उषा यहाँ आई थी?" जलेबी मैंने पकड़ ली।

"तारादेई अस्पताल में दाखिल है।" हलवाई ने कहा, "उसकी हालत बहुत नाजुक है। सभी बच्चियाँ वहीं गई हैं..."

उषा के परिवार में भी मेरे परिवार की तरह एक ही पुरुषजन था - पन्नालाल। बाकी वे पाँच बहनें ही बहनें थीं। शादी भी अभी तक सिर्फ उषा ही की हुई थी।

"सिविल में?" मैंने पूछा।

"वहीं ही। सरकारी जो ठहरा..."

उस दिन दफ्तर में अपना पूरा समय मैंने ऊहापोह में काटा।

अस्पताल जाऊँ? न जाऊँ?

अम्मा क्या बोलेगी? क्या सोचेगी?

मुझे बताए बगैर ससुराल वालों से मिलने लगा? मेरी सलाह बगैर उधर हलवाई के पास चला गया? जलेबी भी खा ली?

कढ़ाई वाली गली में मेरे आने-जाने को लेकर अम्मा बहुत चौकस रहा करती। उषा के परिवार में से मेरी किस-किससे बात हुई? वहाँ मुझे क्या-क्या खिलाया-पिलाया गया? क्या-क्या समझाया-बुझाया गया?

सिविल जाना फिर मैं टाल ही गया।

शाम घर पहुँचा तो अम्मा फिर पिछौहे वैर-भाव पर सवार हो ली, "समधियाने की ढिठाई अब आसमान छू रही है। अभी तक कोई खबर नहीं भेजी..."

"ढिठाई है तो," ...मैंने झट हाँ में हाँ मिला दी।

हलवाई की खबर न खोली।

अम्मा के सवालों की बौछार के लिए मैं तैयार न था।

"दिल अपना मजबूत रखना अब। इतनी ढिलाई देनी ठीक नहीं। तारादेई बीमार है तो ऐसी कौन-सी आफत है? उषा के अलावा उधर उसे देखने वालियाँ चार और हैं। उषा को क्या सबसे ज्यादा देखना-भालना आता है? पन्नालाल के पास मानो फुरसत नहीं तो उषा को यहाँ आकर हमें पूछना-बतलाना जरूरी नहीं रहा क्या?"

तीसरा दिन भी गुजर गया। बिना कोई खबर पाए।

फिर चौथा दिन गुजरा। फिर पाँचवाँ। फिर छठा।

पास-पड़ोस से उषा को पूछने कई स्त्रियाँ आईं। सभी की कढ़ाई उषा की सलाह से आगे बढ़ा करती।

"उषा कहीं दिखाई नहीं दे रही?" अम्मा से सभी ने पूछा, "रूठकर चली गई क्या? हुनर वाली तो है ही। इधर काम छोड़ेगी तो उधर पकड़ लेगी..."

"काम तो उधर उसने पकड़ ही लिया है।" अम्मा के पास हर सवाल का जवाब रहा करता। "उसकी माँ को कढ़ाई का कोई बड़ा ऑर्डर मिला था और अपनी इस गुलाम को उसने बुलवा भेजा। हमें कौन परवाह है? हमारी बला से! उनकी गुलामी उसे भाती है तो भाती रहे..."

सातवें रोज पन्नालाल मेरे दफ्तर चला आया।

मन में मेरे मलाल तो मनों रहा, लेकिन खुलेआम उसकी बेलिहाजी मुझसे हो न पाई और लोगों को दिखाने-भर के लिए मैंने उसके पाँव छू लिए। हमारे दफ्तर में कई लोग उसे जानते थे, हालाँकि उसका दफ्तर हमारे दफ्तर से पंद्रह-सोलह किलोमीटर की दूरी पर तो ही था। हम चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी जिस यूनियन के बूते बोनस और तरक्की पाते रहे, उस यूनियन का वह लगातार तीन साल तक सेक्रेटरी रह चुका था और इन दिनों उसका वाइस प्रेसिडेंट चुना गया था। मेरे पिता के गुजरने पर इस दफ्तर में मृतकआश्रित की हैसियत से मुझे उनकी चपरासीगिरी दिलाने में भी उसने खूब दौड़-धूप की थी, हालाँकि अम्मा तो तभी बूझी थीं, 'इस पन्नालाल के मन में अपनी एक लड़की को इधर खिसकाने का इरादा है...'

"हमारे साथ बुरी बीती है।" पन्नालाल ने मेरे कंधे पर अपना एक हाथ ला टिकाया, "बहुत बुरी बीती है, बेटा! तारादेई के दोनों गुर्दे जवाब दे गए थे। बहाली की एक ही सूरत बची थी, उसके एक गुर्दे की बदलाई..."

"लेकिन गुर्दा तो बहुत ऊँची कीमत पर बिकता है।" मुझे अपने दफ्तर में अगर कोई एक चीज बहुत पसंद थी तो वह था - सुबह का अखबार। उसे मैं जरूर पढ़ता और रोज पढ़ता। वहीं अखबार ही से मैंने जाना था, उधर पंजाब के कुछ पेशेवर डॉक्टर गुर्दों की खरीद और बेची में धर लिए गए थे। गरीब रिक्शेवालों-मजदूरों से औने-पौने दाम पर गुर्दे खरीदते रहे थे और अमीर मरीजों से एक-एक गुर्दे की कीमत की एवज में चालीस से पचास हजार रुपए तक ऐंठते थे।

"नहीं!" पन्नालाल झेंप गया। "डॉक्टर लोग बाहर से गुर्दा तभी खरीदने को बोलते हैं जब घरवालों में से किसी का भी खून और टिश्यू मरीज से मेल न खाता हो..."

"उषा का गुर्दा लेंगे?" मुझे खटका हुआ।

"खून ही उसका मेल खाया। टिश्यू ही उसका मेल खाया।" पन्नालाल की झेंप बढ़ गई, क्या मैंने और क्या उन चारों लड़कियों ने सभी टेस्ट करवाए, लेकिन ना, डॉक्टर लोग ने उषा ही के लिए हामी भरी..."

"गुर्दा ले भी लिया?" मेरे तलुवों और हथेलियों पर अंगारे दौड़ गए।

"मजबूरी ही ऐसी रही। क्या करते? कहाँ जाते?"

"हमारे पास आते।" पन्नालाल का हाथ अपने कंधे से मैंने नीचे झटक दिया।

"कब आते? एक बार जो अस्पताल पहुँचे तो फिर दम मारने की फुरसत न मिली। इस बीच हलवाई भाई ने लड़कियों को बतला दिया था, तुम्हें खबर है। पूरी खबर है। हमने बल्कि सोचा, तुम जरूर कहीं फँस गए हो जो दोबारा खबर लेने नहीं आ पाए, न घर पर, न ही अस्पताल में..."

"उषा कहाँ है**?**" मैंने थूक निगला।

"तुम्हारे क्वार्टर पर। अभी उसे वहीं पहुँचाकर आ रहा हूँ। थोड़ी कमजोरी की हालत में है। डॉक्टर लोगों ने दस दिन का आराम बतलाया है। ध्यान रखना..."

मेरी तरफ पन्नालाल की पीठ होने की देर थी कि साइकिल स्टैंड से अपनी साइकिल मैंने उठाई और अपने क्वार्टर की ओर लपक लिया।

"आ गई है।" अम्मा बाहर के बरामदे की दीवार की ओट में हाथ का पंखा लिए बैठी थी। दो-दो क्वार्टरों के सेट में बने हमारे साझे बरामदे के बीचों-बीच हमने और हमारे बगल वालों ने खुली ईंटों की एक दीवार खड़ी कर रखी थी, ताकि अपनी-अपनी हकदारी का दोनों को एक समान ध्यान रहे।

"कहाँ है**?**" मैं चीखा।

अंगारों की चुनचुनाहट अब मेरी बोटी-बोटी में दाखिल हो चुकी थी।

"क्या बात है?" छत के पंखे वाले अपने कमरे से उषा बाहर निकल आई।

हाल बेहाल। रंग एकदम पीला। मानो सारा खून निचुड़ गया हो।

"तेरी करतूत सुनकर आ रहा हूँ..."

"कैसी करतूत?" अम्मा की आवाज में खुशी झूल-झूल गई।

"क्या किया है मैंने?" उषा मुकाबले पर उतर आई।

"पचास हजार का अपना गुर्दा अपनी माँ को दान में दे आई हो। बिना हमसे पूछे -जाने..."

"क्या?" अम्मा की चीख निकल गई, "हाय-हाय! जभी मैं कहूँ, आते ही यह बिस्तर पर क्यों लेट ली है? पन्नालाल इसे बाहर ही से छोड़कर कैसे लौट लिया है? अंदर मुझसे मुआफी माँगने क्यों नहीं आया? लेकिन आता भी तो क्या मुँह लेकर आता? क्या कहता? लीजिए, लीजिए, गूदा मैंने धर लिया है और गुठली लौटा रहा हूँ..."

"गुर्दा मेरा था," उषा ऊँची उड़ने लगी, "उस पर मेरा हक था। यहाँ से उसे नहीं चुराया था मैंने। यहाँ से उसे नहीं उठाया था मैंने..."

"तेरी यह मजाल?" दीवार की खुली एक ईंट मैंने उठाई और उसके सिर पर दे मारी, "इतना सब कर लेने के बाद अब अपना हक हम पर जतलाएगी?"

खून का फव्वारा उसके सिर से छूटते हुए अम्मा ने और मैंने एक साथ देखा, लेकिन अम्मा पहले हरकत में आई - "दीवार पर अब गिर पड़ी है, इस कमजोर हालत में। देख तो बेटे, इसे कहीं ज्यादा चोट जो नहीं लग गई?"

ओट में खड़े सभी पड़ोसी बच्चे बाहर निकलकर हमारे पास चले आए।

खून देखकर बगल वाला पड़ोसी बच्चा अपनी माँ को लिवा लाया।

उसने इधर-उधर से बर्फ का जुगाड़ भी किया।

खून रिसना अब बंद हो, जब बंद हो, कब बंद हो...

अस्पताल या डॉक्टर का नाम हममें से किसी के होंठों पर न आया।

आता भी कैसे?

हमारे इन क्वार्टरों से डॉक्टर तो एक तरफ, डॉक्टर की जात भी मीलों-मील दूर रही।

बर्फ की आवाजाही की अफरातफरी लंबी न चली।

जल्दी ही उषा परले पार हो गई।

मातमपुरसी के लिए जैसे ही जुटाव बढ़ने लगा, मैं अम्मा को अलग ले गया - "किसी ने मुझे ईंट चलाते हुए देखा क्या?"

"देखा भी होगा तो किसी को हमसे क्या मतलब?" अम्मा ने मुझे भींच लिया, "और फिर कमबख्त उस लड़की में जान ही कितनी बची थी? टका-भर?"

"पन्नालाल चुप बैठने वाला नहीं..."

"जिसने हमें उलटे उस्तरे से मुँडा? अँधेरी देकर बेशकीमती हमारी चीज उषा से निकिया ली? तिस पर, इतने दिन हमें बेखबर रखा?"

"यूनियन में उसका रुतबा ऊँचा है..."

"कैसा रुतबा? चार-चार लड़कियाँ जिसकी छाती पर मूँग दल रही हों, क्या कहेगा वह अपनी यूनियन से? और अगर कुछ कहना शुरू करेगा भी तो उसकी दूसरी बेटी इधर लिवा लाएँगे, अपने पास, तेरी बहू बनाकर..."

मालूम नहीं, कढ़ाई वाली गली के उस हलवाई की बेदाम वह जलेबी बेमौका मेरी जबान पर कैसे आ बैठी और अम्मा की